# नारी के खंडित दाम्पत्य और भग्न स्वप्नों का दस्तावेज त्याग–पत्र (1937)

*डॉ. प्रतिभा शुक्ला

**शोध सारांश**

'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता' (मनुस्मृति) जैसी उक्ति से 'नारी अस्मिता का शंखनाद करके जिस समाज में, और जिस समाज ने नारी को 'मानवी' से उठाकर 'देवी' (देवत्व) के भव्य सिंहासन पर आरूढ़ कर दिया था, क्या आज उसी समाज में हम अपने चारों और अनगिनत 'भंवरी देवी, शाहबानो, अंजना मिश्रा, गुडिया, इमराना और मृणाल को नहीं पाते हैं? जिन्हें कभी तो सामन्तशाही ने, तो कभी तथाकथित धर्म के ठेकेदारों ने, तो कभी परिवार में ही संरक्षक की भूमिका का निर्वहन करने वाले पारिवारिक सदस्यों ने अवसर पाते चूर–चूर कर दिया है।

जैनेन्द्रीजी द्वारा रचित उपन्यासों 'परख, सुनीता के बाद तीसरी कड़ी के रूप में वे 'त्याग–पत्र' की रचना करते हैं। नायिका प्रधान उपन्यास त्याग–पत्र की मृणाल नायिका है। शिल्पगत् नवीनता और नारी अस्मिता एवं मूल्यों की दिशा में यह उपन्यास आत्मकथात्मक है।

सर एम.दयाल (प्रमोद) अपनी बुआ–मृणाल की मृत्यु से अवसन्न होकर अपनी चीफ जजी पद से त्यागपत्र दे देते हैं क्योंकि अपनी आन्तरिक चिन्तना और दायित्व बोध के चरम शिखर पर पहुँचकर वे अत्यधिक संवेदनशील हो जाते हैं और बुआ की मृत्यु का मूल–उत्तरदायी अपनी असमर्थता को मानते है।

प्रमोद की बुआ–मृणाल अनिंद्य सुन्दरी हैं। मातृ–पितृ विहीन है फलस्वरूप भाई–भाभी के संरक्षण में रहती है। वह अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करती है। भाभी को जब इसका पता चलता है तो उस पर बेतहाशा मार पड़ती है। अन्ततः उसके भाई–भाभी जल्दबाजी में उसका विवाह एक अधेड़े उम्र के दुहाजू से कर देते हैं। सहज, सरल और संवेदनशील मनवाली मृणाल प्रथम भेंट में ही पति से शीला के भाई के संबंध में सब कुछ कह डालती है। शंकालु और घमंडी पति उसे घर से निकाल देते हैं। स्वाभिमान और आत्मव्यथा में डूबी मृणाल पीहर न जाकर एक कोयले वाले के साथ रहने लगती है। प्रमोद के घर चलने का आमन्त्रण वह ठुकरा देती है। कोयले वाले के धोखा देने पर मृणाल वेश्याओं की बस्ती में जा पहुँचती हैं, जहाँ सत्तरह वर्षों तक उपेक्षित जीवन बिताती हुई असमय मृत्यु को प्राप्त होती है। इस तरह मृणाल का जीवन अतृप्ति, सामाजिक विद्रोह, और आत्मपीड़न से अभिशप्त है। ''यह व्यक्तिवादी चेतना से युक्त अधोगति के स्तर पर आत्मपीड़ा, भोग की यथार्थता का प्रतीक है।''[1]

पति द्वारा निष्कासित किए जाने पर भी वह पति–गृह से पत्नीत्व का अधिकार, समझे हुए है, और इस प्रकार न वह घर तोड़ना चाहती है, और न समाज ही (जबकि परिवार और समाज ने उसे तोड़ने में कोई कसर बाकी नहीं रखी) बल्कि वह समाज से अलग रह अपनी मंगलाकांक्षा में स्वयं टूटती है। डॉ. देवराज उपाध्याय ने ''त्यागपत्र को हिन्दी क्या साहित्य के लिए एक विचित्र मनोवैज्ञानिक दस्तावेज माना है जिसमें मृणाल एक 'अस्वीकृत अनावश्यक

बालिका' के रूप में चित्रित है।[2]

वस्तुतः त्यागपत्र आरोपित और खंडित दाम्पत्य का एक ज्वलन्त उपन्यास है। एक कुलीन शिक्षित महत्वाकांक्षी बालिका मृणाल को उसकी इच्छा के विपरीत अधेड पति के गले मढ़ कर जीवन की नई स्थिति से मुकाबला करने तथा पतिव्रता का निर्वाह करने की अपेक्षा के साथ छोड़ दिया जाता है।

'मृणाल' कदाचित हिन्दी उपन्यासों में सर्वाधिक चर्चित पात्र है। इसके चारित्रिक उदात्त पर प्रकाश डालते हुए बाजपेयी जी लिखते है।

''पूरे उपन्यास में मृणाल का चरित्र अपने असाधारण संकेतों के कारण पाठक की दृष्टि को आकर्षित करता है। वे आगे लिखते हैं। जैनेन्द्र के अन्य नारी पात्रों में पति की उपेक्षा करके पर पुरूष के प्रति जो एक प्रछन्न आकर्षण मिलता है, वह भी इस उपन्यास की नायिका मृणाल में व्यक्त नहीं है। जैनेन्द्र ने बड़े कौशल के साथ उसे एक के बाद दूसरे और दूसरे के बाद तीसरे पुरूष के साथ संबंधित किया है। पर यहाँ वेदना के आधिक्य के कारण पाठक की (स्तब्ध) संवदेना मृणाल को ही मिलती हैं।''[3]

इसी प्रकार नगेन्द्र जी ने मृणाल के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हुए कहा है–

''मृणाल में असाधारणता है। जीवन में सदा नकार पाते रहकर भी उसका मन अतिशय संवदेनशील हो गया है।''[4]

मृणाल का परिस्थिति और विद्रोहवश एक पुरूष से दूसरे पुरूष से जुड़ने की स्थिति की समानता हमें प्राचीन युग में 'माधवी' के साथ भी मिलती है।' माधवी जिसे अपने पति–गालव के गुरू ऋण से 'मुक्ति' के लिए जड़ पदार्थ की भाँति 'युक्ति' के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इसे जुड़ने और टूटने की अनवरत् प्रक्रिया से गुजरते हुए अपने चारों ओर के पाप पंकिल वातावरण से असंपृक्त मृणाल अपनी हीनतम स्थिति में भी महिमा मंडित है, संवेदना और सहानुभूति की पात्रा है।

सामाजिक और पारिवारिक, मर्यादा और संरक्षण के लिए 'मृणाल' का विवाह कोई अनहोनी घटना नहीं है, किन्तु मर्यादा और संरक्षण के नाम पर उसकी इच्छा के विरूद्ध एक अधेड, विधुर से उसका नाता जोड़ना निश्चित रूप से अमानवीय है। यह खंडित दाम्पत्य की समस्याओं के नवीन सूत्रों का सूत्रपात है।

पति यदि देवता है, तो पत्नी भी देवी है। वह दासी नही बल्कि समान अधिकारों के साथ एक मित्र एक सहचरी है। दोनों ही एक दूसरे के शिक्षक हैं। विवाह हिन्दू समाज और जीवन का एक सहज धर्म है, मगर तब–जब दोनों समान धर्मा, (आचार विचार) सम आयु हो। सह अस्तित्व के लिए आतुर हो, प्रगति सुख और, आत्माभिव्यक्ति के आकांक्षी हो। आयु का अंतर वैवाहिक जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप हैं। जो विशेष रूप से नारी पक्ष के लिए ही अहितकर और चिन्तनीय होता है।

मृणाल ने विवाह को– 'विवाह' न कभी जाना और न माना। वह अपने विवाह से कभी सन्तुष्ट न हुई उसका विवाह यदि शीला के भाई के साथ समाज और परिवार की सहमति से होता तो वह निश्चित रूप से सुखी और सफल हो सकती थी। तब भी मृणाल अपनी ओर से सहज, स्वाभाविक, कुंठारहित, स्वस्थ पत्नीधर्म का निर्वहन करना चाहती थी। पतिव्रत पालन हेतु ही वह अपने पूर्व वृतान्त का वितरण बड़े साहस के साथ पति को दे डालती है। प्रमोद को अपनी व्यथा सुनाते हुए वह प्रमोद से कहती हैं।

''ब्याह के बाद मैने बहुत सोचा। बहुत सोच–सोच कर अन्त में यह पाया कि मैं छल नहीं कर सकती। छल

पाप है। हुआ जो हुआ। ब्याहता को पतिव्रता होना चाहिए। उसके लिए उसे पहले पति के प्रति सच्ची होना चाहिए। सच्ची बनकर ही समर्पित हुआ जा सकता है।''[5]

पत्नी मृणाल की पूर्व जन्मपत्री जानकर पति का पुरूषत्व जाग जाता है। वह परिस्थिति को बिना समझे उसके प्रति कठोर, उग्र और घोर घृणा की प्रतिमूर्ति बन जाता है।

पति द्वार तिरस्कृत, पीहर द्वारा अपमानित तथा प्रेमी द्वारा पुरस्कृत नारी का समाजद्रोही बन जाना स्वाभाविक ही है। मृणाल ने भी इसी स्वाभाविक धर्म को अपनाया है। अपने दाम्पत्य को विघटित होते देख कर वह अपने प्रेमी और पीहर दोनों को सदा–सदा के लिए अलविदा कह देती है। विवाहोपरान्त प्रेमी को लिखे पत्र वस्तुतः प्रेमपत्र नही थे। उन पत्रों में उनके दिल का दर्द और उस दर्द की 'दवा' विष रूप में माँगी गई थी। जिसे पढ़कर शीला के भाई ने उसे हजार टुकडों में (विभक्त) चीरकर कहा था–''यह है दवा ले जाओ। पत्र के हजार टुकड़ों ने मानो मृणाल की भावनाओं को भी टुकड़े–टुकड़े कर दिया था।

प्रेम और दाम्पत्य की दोनों धाराओं से कटी–टूटी मृणाल के शेष दिन कष्टों को झेलते हुए पीड़ा के जीवन दर्शन का सफलतापूर्वक निर्वहन करते हुए बीतते हैं। वह कहती हैं– ''वहीं सार है। वही जमा हुआ दर्द मानव की मानस–मणि है, उसके प्रकाश में मानव का गतिपंथ उज्ज्वल होता है।''[6]

खंडित दाम्पत्य के अपने अनेक प्रश्न हैं अपनी समस्यायें हैं। भारतीय समाज ''परित्यक्ता को जो कलंक देता है वे आजीवन नहीं मिटते। अनचाहे व्यक्ति के साथ वैवाहिक बंधन का वह कुछ समय तक मार खाकर गाली (हरामजादी) सुनकर चलाती है। कोयले वाले के प्रति आत्मोत्सर्ग करने वाली मृणाल अपने जीवन दर्शन को इन शब्दों में व्यक्त करती है मैं स्त्री धर्म को पतिव्रत धर्म ही मानती हूँ। उसको स्वतंत्र धर्म मैं नहीं मानती।

वह मुझे नहीं देखना चाहते, यह जानकर मैने उनकी आँखों के आगे से हट जाना स्वीकार कर लिया।[7]

आगे चलकर जब प्रमोद बुआ से पूछता है कि बुआ तुम घर क्यों नहीं आ गई, तो वह स्पष्ट बता देती है– कि ''स्त्री जब तक ससुराल की है तभी तक मैके की है। ससूराल से टूटी, तब मैके से आप ही टूटी।''[8]

कहा जा सकता है कि अभिशप्त शरीर तप्त मन और जब्त आश्रयवाली मृणाल की मनः स्थिति विद्रोह, समर्पण एवं खंडित दाम्पत्य से उपजी करूणा की कहानी है। जिसे जैनेन्द्र जी ने बडी जीवन्तता और मार्मिकता के साथ चित्रित किया हैं। मृणाल का यह चरित्र नारी के देवत्व के दिवास्वप्न को खंडित करता है। यही खंडित दिवास्वप्न नारी के अस्तित्व बनाम स्वतन्त्रता–समानता के प्रश्न को ''नित्यप्रश्न'' की तरह उठाते हैं? क्या यही हैं नारी का देवत्व? क्या यही है नारी का अस्तित्व? और क्या यहीं है उसकी स्वतंत्रता? नारी की अस्मिता और स्वतंत्रता का उद्घोष करने वाले पुरूष प्रधान समाज में शायद आज भी नारी–अनसूया गुप्ता के शब्दों में–

''बहुत सारे देशों में,
बहुत सी महिलाएँ–
एक ही भाषा बोलती हैं–
मौन की।''

मृणाल ने– ''जिसे चाहा वह मिला नहीं, अनचाहे ने उसे चाहा नहीं।'' इस दर्द को उसने मौन रहकर भोगा और अन्त में अनन्त मौन में विलीन होकर नारी संवेदनाओं और पीड़ा को मुखरित और अनुत्तरित छोड़ गयी।

*व्याख्याता
हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय, किशनगढ़
अजमेर (राज.)

संदर्भ सूची

1. विजय कुलश्रेष्ठ–जैनेन्द के उपन्यासों में नारी समस्या–युवाबोधक पत्रिका अगस्त 1969 पृष्ठ–7
2. देवराज उपाध्याय–जैनेन्द के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पृष्ठ 145–159
3. नन्द दुलारे बाजपेयी–नया साहित्य नये प्रश्न पृष्ठ 196
4. डॉ. नगेन्द्र–विचार और अनुभूति–पृष्ठ 140
5. जैनेन्द्र–त्यागपत्र पृष्ठ 62
6. जैनेन्द्र–त्यागपत्र पृष्ठ 95
7. जैनेन्द्र–त्यागपत्र पृष्ठ 62
8. जैनेन्द्र–त्यागपत्र पृष्ठ 62